

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 3 अध्याय 10: दशविध सृष्टि का वर्णन

13 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



विदुर, समझ की अपनी निरन्तर प्यास में, ऋषि मैत्रेय से एक सरल प्रश्न पूछते हैं जिसका उत्तर उनकी कल्पना से भी विशाल है: ब्रह्मा ने कितने प्रकार के जीवों को उत्पन्न किया? जो इसके पश्चात् आता है वह सम्पूर्ण सृष्टि-व्यवस्था का एक मानचित्र है — भगवान् तथा ब्रह्मा दोनों से प्रवाहित सृष्टि की नौ धाराएँ, तथा गणना को पूर्ण करने वाली दसवीं, पदार्थ के सूक्ष्मतम बीज से लेकर उन पौधों तक जो चल नहीं सकते, उन पशुओं तक जो स्वयं विचार नहीं कर सकते, इच्छाओं से व्याकुल मनुष्यों तक, तथा स्वर्ग के तेजोमय समूहों तक फैली हुई।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। नवम अध्याय का समापन इस दृश्य से हुआ था कि भगवान्, कमल-नाल के अग्रभाग पर ब्रह्मा को दर्शन देकर, नवजागृत सृष्टिकर्ता को सृष्टि रचने के उपाय का उपदेश देते हैं — और फिर दृष्टि से अन्तर्धान हो जाते हैं, ब्रह्मा को अकेला उस कार्य के साथ छोड़कर। दशम अध्याय ठीक वहीं से कथा उठाता है। विदुर, सदैव की भाँति उत्सुक कि मैत्रेय की कथा का एक-एक सूत्र पूर्णतः सामने आए, सर्वाधिक स्वाभाविक प्रश्न पूछते हैं: अब जब भगवान् अन्तर्धान हो गए हैं, ब्रह्मा ने वास्तव में क्या किया, तथा उन्होंने कितने प्रकार के जीवों को अस्तित्व में लाया? मैत्रेय का उत्तर भागवत के महान् संरचनात्मक प्रसंगों में से एक है — सृष्टि की एक सम्पूर्ण वर्गीकरण-व्यवस्था, दस भिन्न धाराओं में विभाजित, जिनमें से चार सीधे भगवान् द्वारा नामित तथा छह ब्रह्मा के माध्यम से प्रकट होने वाली, जो पृथ्वी में मौन-भाव से जड़ जमाए पौधों से लेकर स्वर्ग के तेजोमय सभा-स्थलों तक सब कुछ की सूची बनाती है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 3 (तृतीय स्कन्ध)
- अध्याय: 10 (दशम अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: दशविध सृष्टि का वर्णन
- मुख्य वक्ता: ऋषि मैत्रेय, विदुर को सम्बोधित करते हुए — यह सम्पूर्ण कथा श्रीशुकदेव गोस्वामी द्वारा राजा परीक्षित को, तथा सूत गोस्वामी द्वारा ऋषि शौनक एवं नैमिषारण्य की सभा को सुनाई गई
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: मैत्रेय का आश्रम, विदुर को सृष्टि की उत्पत्ति पर चल रहे प्रवचन में, नवम अध्याय में ब्रह्मा को भगवान् का उपदेश प्राप्त होने के तुरन्त पश्चात्
- मुख्य विषय: ब्रह्मा की दीर्घ तपस्या तथा कमल एवं तीनों लोकों की उनकी खोज; भगवान् की काल-शक्ति; तथा दशविध सृष्टि — प्रकृति तथा विकृति से मिलकर उत्पन्न नौ धाराएँ, साथ ही स्वर्गीय जीवों की अष्टविध सृष्टि में परिणत होने वाली दसवीं
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 3, अध्याय 10, श्लोक 1-29
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

विदुर का प्रश्न तथा ब्रह्मा की दीर्घ तपस्या

इस अध्याय में मैत्रेय की कथा असामान्य रूप से विदुर द्वारा उस प्रश्न को गढ़े जाने से आरम्भ होती है जो आगे आने वाले सब कुछ को आकार देगा। जब भगवान् ब्रह्मा की दृष्टि से अन्तर्धान हो गए, विदुर पूछते हैं, ब्रह्मा — सम्पूर्ण सृष्टि के पितामह — ने अपने शरीर से अथवा मन से किस प्रकार जीवों को जन्म दिया, और वे कितने भेदों में विभक्त हैं? वे मैत्रेय से, जिन्हें वे विशाल ज्ञान रखने वालों में अग्रगण्य कहकर सम्बोधित करते हैं, निवेदन करते हैं कि वे उनके सभी संशयों को, एक-एक बिन्दु करके, दूर करें।

विदुर उवाच ।

अन्तर्हिते भगवति ब्रह्मा लोकपितामहः ।

प्रजाः ससर्ज कतिधा दैहिकीर्मानसीर्विभुः ॥ १ ॥

vidura uvāca antarhite bhagavati brahmā loka-pitāmahaḥ prajāḥ sasarja katidhā daihikīr mānasīr vibhuḥ

अर्थ: विदुर ने कहा: जब भगवान् दृष्टि से अन्तर्धान हो गए, तब सम्पूर्ण सृष्टि के पितामह ब्रह्मा ने अपने शरीर से अथवा अपने मन से कितने प्रकार के जीवों को उत्पन्न किया? (स्कन्ध 3, अध्याय 10, श्लोक 1)

सूत, नैमिषारण्य के ऋषियों को यह वार्तालाप सुनाते हुए, स्पष्ट स्नेह के साथ बताते हैं कि विदुर द्वारा इस प्रकार पूछे जाने पर मैत्रेय अत्यन्त प्रसन्न हुए — यह प्रश्न, दूसरे शब्दों में, ठीक वैसा ही प्रश्न था जैसा एक सच्चे जिज्ञासु को पूछना चाहिए, और मैत्रेय इसका उत्तर संक्षिप्त सार से नहीं अपितु एक सम्पूर्ण तथा सावधान वर्णन से देते हैं। ब्रह्मा ने, वे आरम्भ करते हैं, पहले पूरे सौ दिव्य वर्षों तक कठोर तपस्या की, उनका मन श्रीनारायण पर अटल रूप से स्थिर था, ठीक वैसे ही जैसे भगवान् ने उन्हें निर्देश दिया था। इस विशाल साधना के पश्चात् ही ब्रह्मा ने अपने चारों ओर देखा और, पूर्णतः जागृत बोध के साथ पहली बार, उसी कमल को देखा जिस पर वे विराजमान थे — तथा उसके चारों ओर के प्रलयकालीन जल को, जो अभी-अभी समाप्त हुए ब्रह्माण्ड-विनाश की उग्र शेष वायु से अब भी उथल-पुथल में थे।

उनकी तपस्या ने केवल समय ही व्यतीत नहीं किया था; उसने उनके सृष्टि-ज्ञान को परिपक्व किया तथा उनकी सृजन-शक्ति को तीक्ष्ण किया। अब असाधारण कार्य करने में समर्थ, ब्रह्मा ने अपने चारों ओर की उस वायु को जल सहित पी लिया — उस अव्यवस्था को शान्त करके ताकि वे स्पष्ट रूप से देख सकें। कमल की ओर पुनः देखते हुए, जो अब उन्हें आकाश तक उठता हुआ दिखाई दे रहा था, उन्होंने संकल्प किया कि इसी कमल के माध्यम से वे उन लोकों को पुनः प्रकाश में लाएँगे जो पिछले कल्प के अन्त में विलुप्त हो गए थे। भगवान् के अपने निर्देश पर कार्य करते हुए, उन्होंने उस विशाल कमल की कर्णिका में प्रवेश किया तथा उसे तीन भागों में विभाजित किया — भूः, भुवः तथा स्वः, तीनों लोक — यद्यपि वह कमल स्वयं इतना विशाल था कि उसे चौदह या उससे भी अधिक भागों में विभाजित किया जा सकता था। ये तीनों लोक, वे स्पष्ट करते हैं, विशेष रूप से वह क्षेत्र हैं जहाँ देहधारी जीव अपने कर्मों का फल भोगते हैं; ब्रह्मा का अपना निवास, सत्यलोक, तथा इसके ठीक नीचे के तीन लोक — महर्लोक, जनलोक तथा तपोलोक — इसके विपरीत उस पुण्य के पुरस्कार के रूप में सुरक्षित हैं जो बिना किसी स्वार्थ के किया गया हो।



श्रीनारायण पर स्थिर सौ दिव्य वर्षों की तपस्या के पश्चात्, ब्रह्मा महान कमल तथा अपने चारों ओर के प्रलयकालीन जल को देखते हैं, वायु तथा जल को शान्त करते हैं, और कमल को भूः, भुवः तथा स्वः — तीनों लोकों में विभाजित करते हैं (श्लोक 4-9)।

भगवान् की काल-शक्ति तथा दशविध सृष्टि

इतना सुनने के पश्चात्, विदुर आगे बढ़कर मैत्रेय से निवेदन करते हैं कि वे उस शक्ति को विस्तार से समझाएँ जिसे ऋषि ने काल कहा है — वही शक्ति जिसके द्वारा अद्भुत कर्मों वाले श्रीहरि अनेक रूप में (ब्रह्माण्ड के रूप में) प्रकट होते हैं। मैत्रेय का उत्तर सृष्टि की तत्त्व-मीमांसा पर भागवत के सर्वाधिक स्पष्ट कथनों में से एक है। काल स्वयं, वे कहते हैं, अभिन्न है, आदि-अन्त रहित है; वह केवल सांसारिक परिघटनाओं के रूपान्तरण के रूप में ही दृश्य होता है। काल को अपना यन्त्र बनाकर, परम पुरुष क्रीड़ावश स्वयं को (ब्रह्माण्ड के रूप में) प्रकट करते हैं। यह ब्रह्माण्ड, ब्रह्माण्ड-विनाश के काल में भगवान् विष्णु की माया द्वारा विलीन होकर, ब्रह्मा से अभिन्न रूप में अव्यक्त अवस्था में विद्यमान रहा था; भगवान् ने तब उसी अभिन्न काल की सहायता से उसे एक पृथक् सत्ता के रूप में पुनः विकसित किया।

इस शिक्षा में एक गहरा तात्पर्य छिपा है जिस पर भक्त को ठहरकर विचार करना चाहिए, क्योंकि यही वह कारण है जिसके चलते मैत्रेय काल की बात उठाते हैं, न कि केवल ब्रह्माण्ड को जैसा वह दिखाई देता है वैसा वर्णित करके रुक जाते हैं। वे यह नहीं कह रहे कि प्रकट जगत् भगवान् के समानान्तर चलने वाली कोई दूसरी, स्वतन्त्र सत्ता है; वे यह कह रहे हैं कि यह स्वयं भगवान् ही हैं, जो अपने-आप से पृथक् प्रतीत हों इस हेतु बनाए गए हैं, तथा काल ठीक वही साधन है जिसके द्वारा यह पार्थक्य का आभास उत्पन्न किया जाता है। आगे जो कुछ भी वर्णित होगा — न ब्रह्मा की तपस्या, न प्रकृति से प्रकट छह धाराएँ, न अभी तक अनकहे पौधे, पशु तथा देवता — उस एक सत्य के बाहर कभी नहीं जाता। इसीलिए सम्पूर्ण सृष्टि को, बिना किसी अतिशयोक्ति के, एक लीला कहा जा सकता है: यह भगवान् का स्वयं से, केवल आभासरूप में, काल के माध्यम से पृथक् होना है, जिससे प्राकट्य का यह नाटक आगे बढ़ सके (श्लोक 12)।

जैसे यह ब्रह्माण्ड आज विद्यमान है, मैत्रेय आगे कहते हैं, वैसे ही यह पहले भी था, तथा इसके पश्चात् भी वैसे ही बना रहेगा — इसकी संरचना कोई मनमानी अथवा एकबारगी घटना नहीं, अपितु एक आवर्ती प्रतिमान है। वह संरचना, वे स्पष्ट करते हैं, अपनी सृष्टि में नवविध है, तथा गणना को पूर्ण करने वाली एक दसवीं धारा है: नौ प्रकृति (भगवान्, भौतिक कारण) तथा विकृति (ब्रह्मा, साधनभूत कर्ता) दोनों से संयुक्त रूप से उत्पन्न, तथा दसवीं सृष्टि उनकी संयुक्त क्रिया के समग्र रूप में समझी जाती है। इसका प्रलय, तदनुसार, त्रिविध है — काल, तत्त्वों तथा गुणों (प्रकृति के तीन गुणों) के माध्यम से।

सर्गो नवविधस्तस्य प्राकृतो वैकृतस्तु यः ।

कालद्रव्यगुणैरस्य त्रिविधः प्रतिसंक्रमः ॥

sargo nava-vidhas tasya prākṛto vaikṛtas tu yaḥ kāla-dravya-guṇair asya tri-vidhaḥ pratisaṅkramah

अर्थ: इस ब्रह्माण्ड की सृष्टि नवविध है — प्रकृति (मूल भौतिक कारण) तथा विकृति (उसके रूपान्तरण) दोनों से उत्पन्न — तथा काल, तत्त्वों तथा गुणों के माध्यम से इसका प्रलय त्रिविध है। (स्कन्ध 3, अध्याय 10; यह सूत्र उसी निरन्तरता-कथन के तुरन्त पश्चात् आता है जिसे गीता प्रेस संस्करण श्लोक 13 के रूप में साथ में क्रमांकित करता है)

मैत्रेय तब उन छह प्रकार की सृष्टि के नाम बताते हैं जो सीधे प्रकृति से, अर्थात् परम कारण भगवान् से, ब्रह्मा के साधन बनने से पहले ही, प्रकट होती हैं। पहली महत्तत्त्व की सृष्टि है, स्वयं ब्रह्माण्डीय बुद्धि, जो केवल तब उत्पन्न होती है जब तीनों गुणों की साम्यावस्था भगवान् की इच्छा से भंग होती है। दूसरी अहंकार का विकास है, जिससे बदले में पाँच स्थूल तत्त्व, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ तथा पाँच कर्मेन्द्रियाँ प्रकट होती हैं। तीसरी सूक्ष्म तत्त्वों (तन्मात्राओं) का विकास है, जो स्वयं स्थूल तत्त्वों में विकसित होते हैं। चौथी इन्द्रियों का विकास है — ज्ञानेन्द्रियाँ तथा कर्मेन्द्रियाँ अपने आप में एक पृथक् सृष्टि-वर्ग के रूप में मानी गई। पाँचवीं उन इन्द्रियों पर अधिष्ठाता देवताओं का विकास है, जो सात्त्विक अहंकार से उत्पन्न होते हैं, साथ ही मन का विकास भी, जो स्वयं सात्त्विक अहंकार का ही एक उत्पाद है। तथा छठी तमस् का ही विकास है, अज्ञान का सिद्धान्त जो बुद्धि को धुंधला करता है तथा प्रत्येक जीव के मन को विचलित करता है। ये छह, मैत्रेय कहते हैं, प्रकृति से — कारणों के कारण भगवान् से — उत्पन्न सृष्टि का निर्माण करते हैं (श्लोक 14-16)। जो शेष रह जाती हैं वे विकृति से, ब्रह्मा से, जो स्वयं भगवान् से उत्पन्न हुए, प्रवाहित होने वाली धाराएँ हैं।



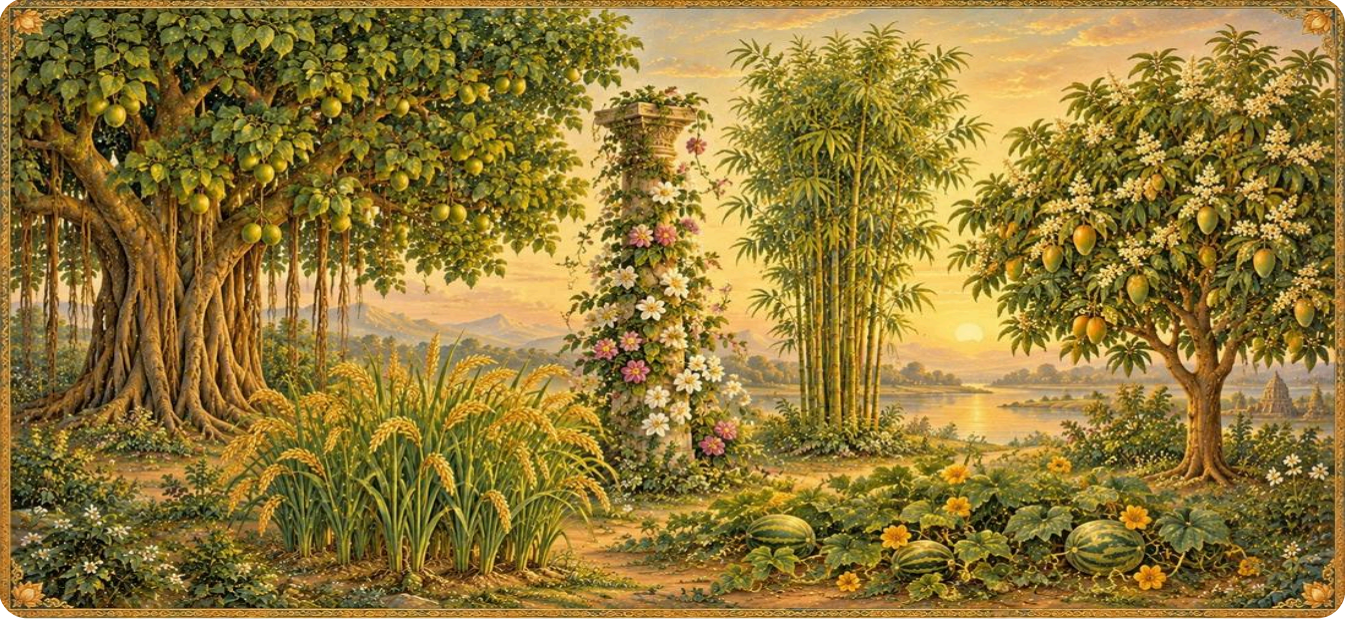
मैत्रेय भगवान् की काल-शक्ति को स्पष्ट करते हैं, जिसके माध्यम से ब्रह्माण्ड विलीन तथा पुनः प्रकट होता है, और सृष्टि की नवविध-प्लस-एक संरचना प्रस्तुत करते हैं — प्रकृति से सीधे प्रकट होने वाली छह धाराएँ, महत्तत्त्व तथा अहंकार से आरम्भ होकर (श्लोक 10-17)।

ब्रह्मा से उत्पन्न तीन सृष्टियाँ: पौधे, पशु तथा मनुष्य

मैत्रेय सावधानीपूर्वक बताते हैं कि ब्रह्मा से प्रवाहित होने वाली सृष्टि भी, वस्तुतः, भगवान् की ही लीला है — क्योंकि ब्रह्मा स्वयं, सृष्टि-कार्य सम्पन्न करने हेतु रजोगुण धारण करके, उसी भगवान् के साधन बने रहते हैं जिनके विचार-मात्र से प्रत्येक दुःख दूर हो जाता है। ब्रह्मा से प्रवाहित सृष्टि के तीन प्रमुख वर्गों में से, समग्र क्रम में सातवीं स्थावर जीवों — पौधों तथा वृक्षों — की सृष्टि है, जो स्वयं छह प्रकारों में विभाजित है: वे वृक्ष जो बिना पुष्पित हुए फल देते हैं, जैसे बरगद तथा पीपल; वार्षिक पौधे तथा शाक जो अपने फल के पक जाते ही सूख जाते हैं, जैसे अनाज; लताएँ जो अन्य वृक्षों अथवा दीवारों के सहारे बढ़ती हैं; कठोर छाल वाले पौधे, जैसे बाँस; लताएँ जो चढ़ने में बहुत कठोर होने के कारण भूमि पर ही फैलती हैं, जैसे खरबूजा तथा तरबूज; तथा अन्त में वे वृक्ष जो फल देने से पहले पुष्पित होते हैं। ये सभी, मैत्रेय बताते हैं, अपनी जड़ों से नीचे से पोषण ग्रहण करते हैं; बाह्य संवेदनशीलता से लगभग रहित, इनमें केवल स्पर्श की आन्तरिक अनुभूति होती है, तथा प्रत्येक प्रकार में कोई-न-कोई विशेष गुण होता है।

आठवीं धारा पशुओं की सृष्टि है — वे जीव, जैसा मैत्रेय परिभाषित करते हैं, जिनके पोषण का प्रवाह उनके शरीर में क्षैतिज रूप से बहता है। वे इनकी अट्ठाईस विभिन्न प्रकार गिनाते हैं, यह बताते हुए कि इनमें कुछ सामान्य लक्षण हैं: उन्हें समय का कोई बोध नहीं, वे तर्क के बजाय सहज-प्रवृत्ति द्वारा संचालित होते हैं, वे अपने लिए उपयोगी वस्तु को मुख्यतः घ्राण-इन्द्रिय से पहचानते हैं, तथा वे अपनी परिस्थितियों के विषय में कोई दूरगामी दृष्टिकोण रखने में असमर्थ हैं। मैत्रेय फिर एक प्रकृति-वैज्ञानिक जैसी सूक्ष्मता से उनके नाम बताते हैं। द्विशफ पशुओं में वे गौ, बकरी, भैंस, कृष्णमृग, सूकर, गवय, रुरु मृग, भेड़ तथा ऊँट को रखते हैं। एकशफ पशुओं में वे गधा, घोड़ा, खच्चर, गौर मृग, अष्टपाद शरभ तथा चमरी को रखते हैं। पंचनख पशुओं में वे कुत्ता, सियार, भेड़िया, बाघ, बिल्ली, खरगोश, शल्लकी, सिंह, वानर, हाथी, कच्छप, गोधा तथा मगरमच्छ के नाम गिनाते हैं। तथा आकाश में विचरण करने वाले पक्षियों में वे बगुला, गिद्ध, बटेर, बाज, भास, भल्लूक, मोर, हंस, सारस, चक्रवाक, कौआ तथा उल्लू के नाम गिनाते हैं।

नौवीं धारा, शेष सभी से पृथक्, मनुष्य-जाति की सृष्टि है — एक ही प्रकार, मैत्रेय कहते हैं, जिसका पोषण-प्रवाह नीचे की ओर उन्मुख है। मनुष्य, वे बताते हैं, अपने भीतर रजोगुण की प्रचुरता रखते हैं; वे स्वभाव से सक्रिय हैं तथा इन्द्रिय-सुखों में आनन्द लेते हैं, सुख जो, उत्सुकता से खोजे जाने पर भी, दुःख में ही निहित हैं। मैत्रेय इस भाग की समाप्ति यह बताते हुए करते हैं कि ये तीनों धाराएँ — स्थावर सृष्टि, पशु-पक्षी, तथा मनुष्य-जाति — आगे आने वाली देवताओं की सृष्टि सहित, सभी ब्रह्मा से प्रवाहित होती हैं। सात्त्विक अहंकार से उत्पन्न, इन्द्रियों के अधिष्ठाता देवता, वे विदुर को स्मरण कराते हैं, पहले ही भगवान् से सीधे प्रवाहित सृष्टि के अन्तर्गत बताए जा चुके हैं; जबकि ब्रह्मा के महान ऋषि-पुत्रों, सनक तथा उनके भाइयों की सृष्टि, दोनों वर्गों से एक साथ सम्बन्धित मानी जाती है — एक अर्थ में ब्रह्मा से प्रवाहित, तथापि, क्योंकि वे रुद्र तथा प्रजापतियों से भी पहले उत्पन्न किए गए थे, स्वयं भगवान् की सृष्टियों में भी गिने जाते हैं।



सृष्टि की सातवीं धारा: स्थावर जीवों के छह प्रकार — फलदार वृक्ष, वार्षिक शाक, चढ़ने वाली लताएँ, कठोर छाल वाले पौधे, भूमि पर फैलने वाली लताएँ तथा पुष्पित होने वाले वृक्ष — प्रत्येक मौन-भाव से पृथ्वी से ऊपर की ओर अपना पोषण ग्रहण करता हुआ (श्लोक 18-19)।



सृष्टि की आठवीं धारा: सहज-प्रवृत्ति तथा घ्राण-इन्द्रिय द्वारा संचालित पशुओं के अट्ठाईस प्रकार — द्विशफ गौ तथा मृग, एकशफ घोड़े तथा चमरी, कुत्ते से लेकर हाथी तक पंचनख पशु, तथा आकाश में विचरण करने वाले पक्षी (श्लोक 20-24)।



सृष्टि की नौवीं धारा: मनुष्य-जाति, एक ही प्रकार जो रजोगुण की प्रचुरता से चिह्नित है, स्वभाव से सक्रिय तथा इन्द्रिय-सुखों की ओर आकर्षित, यद्यपि वे सुख दुःख में ही निहित हैं (श्लोक 25)।

स्वर्गीय जीवों की अष्टविध सृष्टि

मैत्रेय दसवीं तथा अन्तिम धारा — स्वर्गीय जीवों की सृष्टि — को अध्याय के चरम सारांश के लिए सुरक्षित रखते हैं। यह सृष्टि, वे कहते हैं, स्वयं अष्टविध है: देवता; पितर, पूर्वजों की आत्माएँ; असुर; गन्धर्व, स्वर्गीय संगीतकार, अप्सराओं, स्वर्गीय नर्तकियों सहित; यक्ष तथा राक्षस; सिद्ध, अलौकिक शक्तियों से सम्पन्न जीव, चारण, स्वर्गीय भाट, तथा विद्याधरों सहित; भूत, प्रेत तथा पिशाच — भूत-प्रेत तथा दुष्टात्माएँ; तथा अन्त में किन्नर, किम्पुरुष तथा अश्वमुख। इसके साथ, मैत्रेय विदुर को स्पष्ट रूप से बताते हैं, वे अब भगवान् द्वारा उत्पन्न दस सृष्टियों का वर्णन कर चुके हैं — कुछ सीधे, अपने स्वयं के स्वरूप में, तथा कुछ ब्रह्मा, ब्रह्माण्ड के सृष्टिकर्ता, के साधन के माध्यम से।

देवसर्गश्चाष्टविधो विबुधाः पितरोऽसुराः ।

गन्धर्वाप्सरसः सिद्धा यक्षरक्षांसि चारणाः ॥

भूतप्रेतपिशाचाश्च विद्याधराः किन्नरादयः ।

दशैते विदुराख्याता सर्गास्ते विश्वसृक्कृताः ॥

deva-sargaś cāṣṭa-vidho vibudhāḥ pitaro 'surāḥ gandharvāpsarasaḥ siddhā yakṣa-rakṣāṁsi cāraṇāḥ bhūta-preta-piśācāś ca vidyādhraḥ kinnarādayaḥ daśaite vidurākhyātā sargāś te viśva-sṛk-kṛtāḥ

अर्थ: स्वर्गीय जीवों की सृष्टि अष्टविध है — देवता, पितर, असुर, गन्धर्व तथा अप्सराएँ, यक्ष तथा राक्षस, सिद्ध, चारण तथा विद्याधर, भूत, प्रेत तथा पिशाच, तथा किन्नर आदि। हे विदुर, ये ब्रह्माण्ड के सृष्टिकर्ता द्वारा उत्पन्न दस सृष्टियाँ हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 10, श्लोक 27-28)

इस सम्पूर्ण वर्णन को पूरा करने के पश्चात्, मैत्रेय तुरन्त अपनी कथा में आगे आने वाले विषय की ओर मुड़ते हैं: इसके पश्चात्, वे विदुर को बताते हैं, वे शासक वंशों तथा मनुओं द्वारा अधिष्ठित क्रमिक अवधियों के विषय में बताएँगे। वे अध्याय की समाप्ति उस सत्य की ओर पुनः लौटकर करते हैं जो इस सम्पूर्ण वर्गीकरण के पीछे निहित है — कि रजोगुण से युक्त स्वयंभू सृष्टिकर्ता ब्रह्मा स्वयं भगवान् का ही रूप हैं, जो अपने अमोघ संकल्प के बल पर प्रत्येक कल्प के आरम्भ में स्वयं को ब्रह्माण्ड के रूप में विस्तारित करते हैं।

अतः परं प्रवक्ष्यामि वंशान्मन्वन्तराणि च ।

एवं रजःप्लुतः स्रष्टा कल्पादिष्वात्मभूहरिः ।

सृजत्यमोघसङ्कल्प आत्मैवात्मानमात्मना ॥

ataḥ param pravakṣyāmi vaṁśān manvantarāṇi ca evaṁ rajah-plutaḥ sraṣṭā kalpādiṣv ātma-bhūr hariḥ sṛjaty amogha-saṅkalpa ātmaivātmānam ātmanā

अर्थ: इसके पश्चात् मैं तुम्हें शासक वंशों तथा मन्वन्तरों के विषय में बताऊँगा। इस प्रकार स्वयंभू ब्रह्मा, रजोगुण में निमग्न, जो अटल संकल्प वाले श्रीहरि से भिन्न कोई नहीं, प्रत्येक कल्प के आरम्भ में स्वयं के द्वारा, स्वयं के माध्यम से, स्वयं को प्रक्षेपित करते हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 10, श्लोक 29)



सृष्टि की दसवीं तथा चरम धारा: स्वर्गीय जीवों का अष्टविध समूह — देवता, पितर, असुर, गन्धर्व तथा अप्सराएँ, यक्ष तथा राक्षस, सिद्ध तथा विद्याधर, आत्माएँ, तथा किन्नर — जिसके साथ मैत्रेय दस सृष्टियों की पूर्ण गणना पूरी करते हैं (श्लोक 27-29)।

इस स्तोत्र-सदृश सारांश के साथ — दस सृष्टियों का नामकरण, गणना, तथा अन्ततः उनके एकल दिव्य स्रोत की ओर वापसी — तृतीय स्कन्ध का दशम अध्याय समाप्त होता है। एकादश अध्याय मैत्रेय की कथा को एक सर्वथा भिन्न स्वर में आगे ले जाएगा: अब जीवों की गणना नहीं, अपितु स्वयं काल का मापन, परमाणु से लेकर, वह सूक्ष्मतम अविभाज्य कण, मन्वन्तरों तथा ब्रह्मा के सम्पूर्ण जीवन-काल तक।

इस अध्याय को मुख्य शिक्षाएँ

1. सृष्टि का सबसे भव्य वर्गीकरण भी एकल दिव्य स्रोत में ही समाप्त होता है। दस पृथक् धाराएँ, जिनमें से नौ प्रकृति तथा विकृति से संयुक्त रूप से उत्पन्न तथा एक गणना को पूर्ण करने वाली, सभी अन्ततः इसी सत्य में विलीन हो जाती हैं कि स्वयंभू ब्रह्मा, सृष्टि के क्षण में, स्वयं श्रीहरि से भिन्न कोई नहीं (श्लोक 29)।
2. अनुशासन दृष्टि से पहले आता है। ब्रह्मा तब तक कमल, जल अथवा आगे का मार्ग नहीं देख पाते जब तक सौ दिव्य वर्षों की तपस्या, भगवान् पर पूर्णतः स्थिर, उनके ज्ञान तथा उनकी सृजन-शक्ति दोनों को परिपक्व नहीं कर देती — यह स्मरण कराते हुए कि आध्यात्मिक दृष्टि निरन्तर साधना से अर्जित होती है, माँगने पर तुरन्त नहीं मिलती (श्लोक 4-6)।
3. काल भगवान् का अपना यन्त्र है, उनसे बाहर की कोई शक्ति नहीं। काल न आदि रखता है न अन्त, न कोई विभाजन; सांसारिक घटनाओं के आने-जाने में ही वह दृश्यमान बनता है — और उसी काल को अपना उपकरण बनाकर परम पुरुष यह ब्रह्माण्ड प्रकट करते हैं, यह सिखाते हुए कि जो शक्ति सबसे अधिक निर्वैयक्तिक जान पड़ती है वह भी भगवान् द्वारा साक्षात् संचालित होती है (श्लोक 11-12)।
4. पौधों से लेकर देवताओं तक, सृष्टि की प्रत्येक श्रेणी की गणना की गई है, कुछ भी आकस्मिक नहीं। भागवत की सृष्टि-दृष्टि मौन वृक्ष तथा तेजोमय गन्धर्व के बीच कोई अन्तराल नहीं छोड़ती — प्रत्येक उसी सृजनात्मक कार्य की एक पृथक्, नामित, सार्थक धारा है, जो एक ऐसी सम्पूर्ण दृष्टि सिखाती है जो सृष्टि के किसी भी भाग को ध्यान देने योग्य न मानने से इनकार करती है (श्लोक 18-28)।
5. मनुष्य-जीवन, अपनी सारी अशान्ति के बावजूद, दिव्य व्यवस्था के भीतर ही नामित तथा स्थापित है। मनुष्य-जाति का वर्णन सीधे-सीधे किया गया है — रजोगुण की प्रचुरता, स्वभाव से सक्रियता, दुःख में निहित आनन्द — इसे दोषी ठहराने के लिए नहीं, अपितु इसे नवविध सृष्टि के भीतर ईमानदारी से स्थापित करने के लिए, ठीक इन्हीं प्रवृत्तियों को पार करने की ओर आवश्यक पहला कदम (श्लोक 25)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

मैत्रेय द्वारा विदुर के प्रश्न के उत्तर की संरचना में ही एक शान्त शिक्षा छिपी है। विदुर कुछ ऐसा प्रश्न पूछते हैं जो लगभग प्रशासनिक लगता है — ब्रह्मा ने कितने प्रकार के जीव बनाए? — और मैत्रेय, सिद्धान्ततः, एक संख्या बताकर आगे बढ़ सकते थे। इसके बजाय वे एक सम्पूर्ण संरचना खड़ी करते हैं: दृष्टि से पहले तपस्या, सृष्टि से पहले यन्त्र के रूप में काल, विकृति से आने वाली तीन के पहले प्रकृति से आने वाली छह धाराएँ, मनुष्यों से पहले पशु, पशुओं से पहले पौधे, तथा अन्त में स्वयं देवता, प्रत्येक धारा उस व्यक्ति के धैर्य से नामित की गई जो मानता है कि सृष्टि में कुछ भी गिनती के लिए बहुत साधारण नहीं है। बिना पुष्पित हुए फल देने वाला वृक्ष उतनी ही सावधान चर्चा पाता है जितनी एक गन्धर्व अथवा एक देवता। यह स्वयं एक शिक्षा है: भगवान् की सृष्टि के प्रति श्रद्धा चयनात्मक नहीं होती। यदि कोई शास्त्र मनुष्य-जाति तक पहुँचने से पहले बरगद वृक्ष के परिजनों की छह प्रकार की गणना करने के लिए रुकता है, तो निश्चय ही सृष्टि का कोई भी भाग — तथा दैनिक जीवन में मिलने वाला कोई भी जीव — उसी अविचलित ध्यान तथा सम्मान से वंचित नहीं है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, अपनी दृष्टि किसी सामान्यतः उपेक्षित वस्तु पर थोड़ी देर टिकाएँ — एक गमले का पौधा, खिड़की पर बैठा कोई कीट, सड़क पर दिखाई देने वाला कोई आवारा पशु। इस अध्याय की भावना में स्मरण करें कि प्रत्येक उसी धारा का अंग है जिसका मैत्रेय ने अभी-अभी सावधानीपूर्वक, विस्तृत रूप से वर्णन किया है: कोई दुर्घटना नहीं, अपितु भगवान् की अपनी नवविध-प्लस-एक योजना का एक नामित भाग। इस छोटे से

अवलोकन को केवल एक क्षणिक दृष्टि नहीं, अपितु एक अर्पण बनने दें। अपने दिन में लौटने से पहले, रुकें और शान्तिपूर्वक दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” उस स्मरण को जीवन के सबसे छोटे तथा सरलता से भुला दिए जाने वाले रूपों के प्रति भी आपकी दृष्टि को विस्तृत करने दें, प्रत्येक में उसी विशाल तानेबाने का एक सूत्र देखते हुए जिसे बुनना ब्रह्मा को सिखाया गया था।

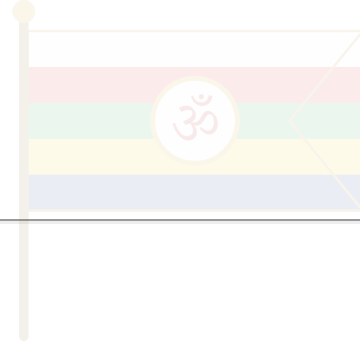
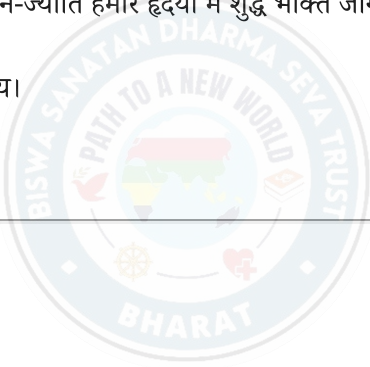
उपसंहार

तृतीय स्कन्ध का दशम अध्याय विदुर के सरल प्रश्न का उत्तर सर्वाधिक सम्भव उदारता के साथ देता है: केवल एक संख्या नहीं, अपितु सृष्टि का एक सम्पूर्ण मानचित्र, ब्रह्मा की सौ वर्षों की तपस्या तथा कमल एवं तीनों लोकों की उनकी खोज से आरम्भ होकर, भगवान् की अपनी काल-शक्ति के माध्यम से, प्रकृति से सीधे प्रवाहित होने वाली छह धाराओं के माध्यम से, तथा आगे तीन धाराओं — पौधे, पशु, मनुष्य — तथा ब्रह्मा से एक साथ प्रवाहित होने वाली स्वर्गीय जीवों की चरम आठवीं प्रकार तक फैला हुआ। कुल दस सृष्टियाँ, नामित तथा गणित, तथा उनमें से प्रत्येक, मैत्रेय अन्त में बल देकर कहते हैं, अब भी श्रीहरि से भिन्न कुछ नहीं, जो प्रत्येक कल्प के प्रारम्भ में स्वयं के द्वारा अपने ही रूप को प्रक्षेपित करते हैं। संख्याओं के विषय में विदुर का प्रश्न, मैत्रेय के हाथों में, सम्पूर्ण अस्तित्व को — जड़ जमाए वृक्ष से लेकर तेजोमय देवता तक — दिव्य आत्म-अभिव्यक्ति के एक निरन्तर कार्य के रूप में देखने की शिक्षा बन जाता है, जो एकादश अध्याय में स्वयं काल के मापन की ओर मुड़ने की भूमिका तैयार करता है।

श्रीमद्भागवत की दिव्य ज्ञान-ज्योति हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।



सन्दर्भ तथा श्रेय

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), तृतीय पुस्तक, दशम अध्याय, पृष्ठ 175–177।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पंडित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र की आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं तथा उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक के साथ सम्बद्धता अथवा समर्थन का कोई संकेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-3-chapter-10-description-of-the-tenfold-creation-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञानम् • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

